[2018] 3 एस. सी. आर 696

मंजू सुराना

वी.

सुनील अरोड़ा और ओआरएस।

(2018 की आपराधिक अपील संख्या 457)

27 मार्च, 2018

[जे. चेलामेश्वर और संजय किशन कौल, जे. जे.]

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 - एस. 19-अभियोजन के लिए आवश्यक पूर्व मंजूरी-के संबंध में भ्रष्टाचार का आरोप

लोक सेवक-अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी-आवश्यकता जांच प्रक्रिया को शुरू करने से पहले यू/एस। 156 (3) Cr.P.C-आयोजितः सवाल यह होगा कि क्या पी. सी. अधिनियम के मामलों में,

एक अलग आयात को प्रयोग की जाने वाली शक्ति के लिए पढ़ा जाना चाहिए

यू/एस। 156 (3) - चाहे एस के कारण। 19 (1) , यू/एस जांच का दायरा। 156 (3) Cr.P.C. को 'संज्ञान लेने' में से एक कहा जा सकता है।

इस प्रकार एक लोक सेवक के मामले में पूर्व मंजूरी की आवश्यकता होती है-पी. सी. अधिनियम के तहत अपराधों के लिए एक लोक सेवक पर मुकदमा चलाने के लिए पूर्व मंजूरी अध्याय 14 Cr.P.C के तहत निहित एक प्रावधान है।

अध्याय 12 Cr.P.C. यू/एस के तहत एक जांच का निर्देश देते हुए। 156 (3) Cr.P.C, केवल इसलिए कि एक लोक सेवक शामिल होगा-Cr.P.C के साथ पढ़े गए पी. सी. अधिनियम के अपराधों की परस्पर क्रिया के संबंध में उत्पन्न जटिलता को देखते हुए, मामले को बड़ी पीठ-दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-s को संदर्भित किया जाता है। 156 (3) .

मामलों को बड़ी पीठ को संदर्भित करते हुए, न्यायालय ने पकड़नाः 1.1 इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस स्तर पर भी

156 (3) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अनुसार, जाँच का निर्देश देते समय, मजिस्ट्रेट द्वारा विवेक का प्रयोग किया जाना चाहिए। इस प्रकार, यह तर्क देना एक स्वीकार्य प्रस्ताव नहीं हो सकता है कि इसके बाद कुछ परिणाम होंगे, मजिस्ट्रेट यांत्रिक और अविवेकी तरीके से कार्य करेगा। यह परीक्षा नहीं हो सकती। [पैरा 33] [713-एफ]

1.2 सवाल यह होगा कि क्या मामलों में

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत आई. डी. 1 की धारा 156 (3) के तहत प्रयोग की जाने वाली शक्ति को अलग से पढ़ा जाना चाहिए, यानी क्या यह कहा जा सकता है कि आई. डी. 1 की धारा 19 (1) के कारण

696 मंजू सुराना बनाम। सुनील अरोड़ा और ओआरएस।

पी. सी. अधिनियम, Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच का दायरा।

इसे 'संज्ञान' लेने में से एक कहा जा सकता है जिससे आवश्यकता होती है

लोक सेवक के मामले में पूर्व मंजूरी। यह कहना तुच्छ है कि किसी लोक सेवक के खिलाफ अपराधों के लिए मुकदमा चलाने की पूर्व मंजूरी पी. सी. अधिनियम Cr.P.C के अध्याय 14 के तहत निहित एक प्रावधान है। इस प्रकार, यह देखना होगा कि क्या इस तरह के उद्देश्य को Cr.P.C के अध्याय 12 में आयात किया जा सकता है।

Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच, केवल इसलिए क्योंकि एक लोक सेवक शामिल होगा। [पैरा 34] [713-जी; 714-ए-बी]

1.3 यह सुरेश चंद जैन बनाम में देखा गया था। मध्य प्रदेश राज्य ने कहा कि आई. डी. 1 की धारा 156 (3) के तहत एक पूर्व-संज्ञान स्तर पर भी, मजिस्ट्रेट के लिए यह खुला है कि वह पुलिस को एफ. आई. आर. दर्ज करने का निर्देश दे और भले ही मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देते हुए इतने शब्दों में न कहे कि एफ. आई. आर. दर्ज की जानी चाहिए, यह पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी का कर्तव्य है कि वह शिकायतकर्ता द्वारा प्रकट किए गए संज्ञेय अपराध के संबंध में एफ. आई. आर. दर्ज करे क्योंकि वह पुलिस अधिकारी उसके बाद ही संहिता के अध्याय 12 में विचार किए गए आगे के कदम उठा सकता है। ए. एस. जी. द्वारा व्यक्त आशंका इन अवलोकनों से उत्पन्न होती है। [पैरा 35] [714-सी-डी]

1.4 उपर्युक्त संदर्भित पूर्ण विवाद और पी. सी. अधिनियम की परस्पर क्रिया के संबंध में उत्पन्न होने वाली पहेली

इस प्रकार, Cr.P.C के साथ पढ़े गए अपराधों का निपटारा एक बड़ी पीठ द्वारा किया जाना आवश्यक है। [पैरा 36] [714-ई]

Crl.M.P. 161/2015 IN SLP (CRl.) नं. 5838/2014।

2.1 वर्तमान विशेष अनुमति याचिका में, प्रतिवादी संख्या 4 को छोड़कर, उत्तरदाताओं को नोटिस जारी किया गया था। चूंकि सीमा पर मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही को प्रतिवादी को नोटिस दिए बिना स्थगित रखने का निर्देश दिया गया था, और उसके बाद उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण याचिका को सीमित रूप से खारिज कर दिया गया था, इसलिए प्रतिवादी संख्या 1 के लिए यह अवसर थाः कार्यवाही की जानकारी उत्पन्न नहीं हुई। प्रत्यर्थी संख्या 1 ने इन कार्यवाही में पक्षों की श्रृंखला से हटाने की मांग की क्योंकि उन्हें गलत तरीके से एक पक्ष के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उक्त याचिका स्वयं शिकायत में दिए गए कथनों पर आधारित है, जो प्रधान सचिव, सार्वजनिक स्वास्थ्य और इंजीनियरिंग विभाग (पीएचईडी) के कार्यों पर शिकायत करना चाहता है, जिसमें [2018] 3 एस. सी. आर.

कहा जाता है कि क्षमता उत्तरदाता संख्या 1 को व्यवस्थित किया गया है। आवेदन में यह कहा गया है कि प्रतिवादी नंबर 1 मुख्यमंत्री के सचिव और प्रधान सचिव के रूप में कार्य कर रहा था।

प्रधान सचिव, पीएचईडी के रूप में। वास्तव में, पीएचईडी के प्रधान सचिव के रूप में काम करने वाले अधिकारी को जवाब देने के लिए नियुक्त नहीं किया गया है

2.2 इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 156 (3) Cr.P.C के तहत प्रक्रिया केवल एक जांच है। बड़ा सवाल यह है कि क्या कोई इस तरह का निर्देश पूर्व मंजूरी के बिना जारी किया जा सकता है जिसे एक बड़ी पीठ को भेजा गया है। यदि अपीलार्थी सफल होता है और पुलिस द्वारा प्रत्यक्ष जाँच के लिए मन बनाने के बाद मजिस्ट्रेट और मजिस्ट्रेट के पास वापस जाने का मामला होता है, तो मजिस्ट्रेट के लिए प्रतिवादी संख्या 1 का नाम शामिल करना हमेशा खुला रहेगा यदि ऐसी सामग्री उसके खिलाफ पाई जाती है।

उसे। [पैरा 46] [716-डी-ई]

2.3 केवल इसलिए कि अपीलार्थी ने शिकायत में प्रतिवादी संख्या 1 को शामिल किया है, उसके नाम की अनुमति देने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है।

जिसे ठीक किया जा सकता है। अपीलार्थी का यह मत नहीं हो सकता है कि किसी भी तरह, प्रतिवादी संख्या 1 को उन कार्यवाहियों में अभियुक्त के रूप में रखा जाना चाहिए, भले ही मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाहियां केवल इस स्तर पर हों कि जाँच के लिए कोई निर्देश होना चाहिए या नहीं। ऐसा नहीं है कि सरकार में प्रत्येक अधिकारी को किसी के संबंध में नियुक्त किया जाना चाहिए। भूमिका निभाई या नहीं। प्रतिवादी नंबर 1 की एक बैठक में केवल उपस्थिति और वह भी जब वह एक हस्ताक्षरकर्ता नहीं था और वास्तव में उस क्षमता में खेलने के लिए कोई भूमिका नहीं थी, जैसा कि कार्यवृत्त से स्पष्ट है, अब उसका नाम एक आरोपी के रूप में शामिल किए जाने को सही ठहराने के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है। यह स्पष्ट रूप से एक विचार है। यह प्रश्न करना अपीलार्थी का काम नहीं है कि किस अधिकारी को उपस्थित होना चाहिए या नहीं होना चाहिए। [पैरा 47] [716-एफ-एच; 717-ए] मंजू सुराना बनाम।

सुनील अरोड़ा और ओआरएस।

2.4 प्रत्यर्थी संख्या 1 को ए से हटा दिया जाना चाहिए

वर्तमान कार्यवाहियों और परिणामस्वरूप दोनों में कलाएँ

ओम्प्लैन्ट। हालांकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि एक स्थिति ए

ई जांच धारा 156 (3) Cr.P.C के तहत निर्देशित है।

ई सामग्री सरणी उत्तरदाता नंबर 1 ए के लिए प्रकाश में आती हैलेकिन, आदेश रास्ते में नहीं आएगा। [पैरा 48] [7]

अनिल कुमार बनाम। एम. के. अयप्पा (2013) 10 एससीसी 705:

[2013] 9 एस. सी. आर. 869; पी. नल्लम्मल बनाम राज्य (1999) 6 एस. सी. सी. 559 [1999] 1 पूरक। एस. सी. आर. 135; एल. नारायण स्वामी

वी. कर्नाटक राज्य (2016) 9 एससीसी 598: [2016] 5 एससीआर 683; आर. आर. चारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [1951] एससीआर

312 ; गोपाल मारवाड़ी बनाम। सम्राट ए. आई. आर. 1943 पैट 245;

कानूनी मामलों के अधीक्षक और स्मरणकर्ता,

पश्चिम बंगाल बनाम. अबनी कुमार बनर्जी एयर 1950 कैल

986 ; जमुना सिंह बनाम। भदाई शाह [1964] 5 एससीआर 37; निर्मलजीत सिंह हून बनाम। डब्ल्यू. बी. राज्य (1973) 3 एस. सी. सी.

753 [1973] 2 एस. सी. आर. 66; देवरपल्ली लक्ष्मीनारायण रेड्डी बनाम। वी. नारायण रेड्डी (1976) 3 एससीसी 252:

[1976] पूरक। एससीआर 524; तुला राम बनाम। किशोर सिंह

(1977) 4 एससीसी 459: [1978] 1 एस. सी. आर. 615; श्रीनिवास

गुंडलुरी बनाम. एस. ई. पी. सी. ओ. इलेक्ट्रिक पावर कंस्ट्रक्शन कार्पोरेशन

(2010) 8 एससीसी 206: [2010] 9 एस. सी. आर. 278; सुब्रमण्यन स्वामी वी. सीबीआई (2014) 8 एससीसी 682 [2014] 6 एससीआर 873;

मकसूद सैय्यद बनाम। गुजरात राज्य (2008) 5 एससीसी 668:

[2007] 9 एससीआर 1113; यू. पी. राज्य बनाम पारस नाथ सिंह (2009) 6 एससीसी 372: [2009] 8 एस. सी. आर. 85; रामदेव फूड

उत्पाद (पी) लिमिटेड v. गुजरात राज्य (2015) 6 एससीसी

439 [2015] 5 एस. सी. आर. 283; सुरेश चंद जैन बनाम। की स्थिति

मध्य प्रदेश (2001) 2 एससीसी 628: [2001] 1 एससीआर

257 ; मोहम्मद. यूसुफ बनाम। अफाक जहां (2006) 1 एस. सी. सी. 627:

[2006] 1 एस. सी. आर. 1-संदर्भित।

मामला कानून संदर्भ

[2013] 9 एससीआर 869

पैरा 5

संदर्भित किया गया है

[1999] 1 पूरक। एस. सी. आर. 135 संदर्भित

पैरा 6

[2016] 5 एससीआर 683

संदर्भित किया गया है

[1951] एससीआर 312

संदर्भित किया गया है

पै

रा 18

संदर्भित किया गया है

एयर 1943 पैट 245

पै

रा 18

संदर्भित किया गया है

ए. आई. आर. 1950 कैल 437

पै

रा 18

आकाशवाणी 1961 एससी 986

संदर्भित किया गया है

पै

रा 19

[1964] 5 एससीआर 37

संदर्भित किया गया है

पै

रा 20

[1973] 2 एससीआर 66

संदर्भित किया गया है

पै

रा 21

[1976] पूरक। एस. सी. आर. 524 संदर्भित

पै

रा 22

[1978] 1 एससीआर 615

संदर्भित किया गया है

पै

रा 23

[2010] 9 एससीआर 278

संदर्भित किया गया है

पै

रा 24

[2014] 6 एससीआर 873

संदर्भित किया गया है

पै

रा 25

[2007] 9 एससीआर 1113

संदर्भित किया गया है

पै

रा 27

[2009] 8 एससीआर 85

संदर्भित किया गया है

पै

रा 28

[2015] 5 एससीआर 283

पै

रा 32

संदर्भित किया गया है

[2001] 1 एससीआर 257

संदर्भित किया गया है

पै

रा 32

[2006] 1 एससीआर 1

संदर्भित किया गया है

पै

रा 32

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील

2018 का सं. 457।

उच्च न्यायालय के 30.04.2014 दिनांकित निर्णय और आदेश से

एस. बी. सी. आर. में जयपुर में राजस्थान के लिए न्यायिक न्यायालय। 2014 की पुनरीक्षण याचिका संख्या 341

के साथ

2018 की आपराधिक अपील No.458।

प्रशांत भूषण, रोहित कुमार सिंह, शक्ति वर्धन, अधिवक्ता।

अपीलार्थी के लिए।

तुषार मेहता, एएसजी, शिव मंगल शर्मा, एसएस शमशेरी, अजय

कपूर, ए. ए. जी., विकास सिंह, वरिष्ठ अधिवक्ता। , एच. डी. थानवी, ऋषि मटोलिया, अनिरुद्ध सिंह, मिलिंद कुमार, सत्य मित्र गर्ग, अंचित शर्मा, सुश्री दीपिका कालिया, कृष सेठ, नचिकेता जोशी, राजीव शर्मा, मेरुसागर सामंताराय, गौतम झा, निशांत रमाकांतराव कटनेश्वरकर, अधिवक्ता। उत्तरदाताओं के लिए।

मंजू सुराना बनाम। सुनील अरोड़ा और ओआरएस।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था संजय किशन कौल, जे।

2018 का आपराधिक आवेदन NO.457

(एस. एल. पी. (सी. आर. एल.) से बाहर निकलना 2014 का No.5838)

1. छुट्टी दे दी गई।

2. अपीलों में उठाए जाने वाले कानून का सवाल यह है कि क्या अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी में भ्रष्टाचार के आरोप हैं। आपराधिक संहिता की धारा 156 (3) के तहत जांच प्रक्रिया शुरू करने से पहले लोक सेवकों का सम्मान आवश्यक है।

प्रक्रिया, 1973 (इसके बाद 'Cr.P.C.' के रूप में संदर्भित)।

3. 2018 की आपराधिक अपील संख्या 457 में (एसएलपी (सी. आर. एल.) से उत्पन्न) 2014 का No.5838), अपीलार्थी ने इसके समक्ष एक शिकायत प्रस्तुत की

विशेष न्यायाधीश (भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, जयपुर महानगर शहर, जयपुर) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 और 13 (इसके बाद 'पीसी अधिनियम' के रूप में संदर्भित) और भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 120 बी के साथ पठित धारा 420,467,468 और 471 के तहत। (इसके बाद 'आई. पी. सी.' के रूप में संदर्भित)। अपीलार्थी ने अपराधों की जाँच और अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ एफ़. आई. आर. दर्ज करने की माँग की।

विशेष न्यायाधीश के समक्ष "सरकार के प्रधान सचिव P.H.E.D. मुख्यमंत्री" के रूप में अभियुक्त के रूप में प्रस्तुत किया गया पहला प्रतिवादी है -

हमारे समक्ष प्रथम प्रत्यर्थी, विशेष न्यायाधीश के समक्ष अभियुक्त के रूप में प्रस्तुत अन्य व्यक्ति, अधीक्षक अभियंता, मुख्य अभियंता, पूर्व मुख्यमंत्री (जैसा कि वह तब थीं), पूर्व वित्त मंत्री, वित्त सचिव, उप महालेखाकार और पी. एस. एल. कंपनी अपने प्रबंध निदेशक के माध्यम से भी प्रत्यर्थी के रूप में हमारे समक्ष हैं। शिकायत में आरोप लगाया गया है कि पेयजल परियोजना Nos.1 से 8 तक, a

एक निविदा प्रक्रिया के माध्यम से व्यक्तिगत निहित स्वार्थ को पूरा करने के लिए साजिश रची गई, जिससे सरकारी कोष को नुकसान हुआ। अंतिम और आठवें अभियुक्त को व्यक्तिगत हित के लिए लाभ दिया गया था। वर्तमान विवाद के उद्देश्य के लिए विस्तृत तथ्यों में जाना आवश्यक नहीं है, लेकिन यह कहना पर्याप्त है कि आरोपों के अनुसार अपीलार्थी के मामले में, परियोजनाओं को चलाने के लिए बजट की कमी थी और प्रतिवादी संख्या 1, तत्कालीन प्रधान सचिव, दिनांक 20.4.2008 की रिपोर्ट पर विचार किया जाना चाहिए था। भुगतान करने के लिए

कहा जाता है कि बकाया और चल रही परियोजनाओं के लिए मुख्य सचिव ने वित्त विभाग को एक प्रस्ताव लिखा था, लेकिन वित्त सचिव ने इतनी बड़ी राशि उपलब्ध कराने में असमर्थता व्यक्त की। कहा गया था कि कोष को खोदा गया था।

18] 3 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

4. यह ध्यान रखना अत्यंत प्रासंगिक है कि तथ्यों से, जो अब सामने आए हैं, उत्तरदाता संख्या 1 न तो इस पद पर थे

P.H.E.D के प्रधान सचिव और न ही समय के प्रासंगिक स्तर पर मुख्य सचिव और उनके कार्यालय का विवरण परिणामस्वरूप सही नहीं है। पहला प्रतिवादी वास्तव में मुख्यमंत्री के प्रधान सचिव का पद संभाल रहा था।

Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच के लिए अग्रेषित किया जा सकता है और न ही धारा 202 और 202 के तहत कोई कार्यवाही शुरू की जा सकती है। Cr.P.C. इस तरह की मंजूरी के अभाव में। इस प्रकार, यह देखा गया कि मंजूरी दाखिल करने पर मामले में आगे की कार्यवाही की जाएगी।

6. अपीलार्थी ने इस आदेश के खिलाफ एक पुनरीक्षण याचिका दायर की, जिसे दिनांकित विस्तृत विवादित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है।

30.4.2014 . आदेश वास्तव में विभिन्न न्यायिक घोषणाओं को संदर्भित करता है और फिर निष्कर्ष निकालता है कि अनिल कुमार बनाम के फैसले को देखते हुए। एम. के. अयप्पा 2 और पी. नल्लम्मल बनाम। राज्य 3 किसी भी मंजूरी के अभाव के कारणों के साथ-साथ एक अंतर्वर्ती आदेश के खिलाफ निर्देशित की जा रही पुनरीक्षण याचिका दोनों के लिए, याचिका विचारणीय नहीं थी। इसके बाद वर्तमान विशेष अनुमति याचिका दायर की गई है।

7. हमने पक्षों के लिए विद्वान वकील को सुना है।

8. अपीलार्थी की ओर से पेश विद्वान वकील श्री प्रशांत भूषण ने अनिल कुमार और एल. नारायण स्वामी बनाम में लिए गए दृष्टिकोण पर सवाल उठाने का अनुरोध किया। कर्नाटक राज्य 'पहले के बाद

निर्णय। तर्क का उप-स्तर यह है कि लोक सेवक के खिलाफ अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी की आवश्यकता केवल तभी उत्पन्न होगी जब संज्ञान लिया जाएगा, जबकि मामले में ऐसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं थी।

1 1 (2013) 10 एस. सी. सी. 705

2 ऊपर 3 (1999) 6 एस. सी. सी. 559

ऊपर

5 (2016) 9 एस. सी. सी. 598 मंजू सुराना बनाम।

सुनील अरोड़ा और ओआरएस। [संजय किशन कौल, जे।]

आई. डी. 1 की धारा 156 (3) के तहत एक जांच शुरू करने का चरण। इस प्रकार, यह तर्क दिया गया कि इन दोनों निर्णयों में टिप्पणियाँ असंगत हैं या पहले की लंबी पंक्ति के साथ संघर्ष में हैं। इस प्रश्न पर निर्णय कि संज्ञान कब लिया गया है, कहा जा सकता है। श्री भूषण ने पीसी अधिनियम की धारा 19 (1) की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया, जो इस प्रकार हैः

" 19. अभियोजन के लिए आवश्यक पूर्व मंजूरी -

(1) कोई भी अदालत दंडनीय अपराध का संज्ञान नहीं लेगी। धारा 7,10,11,13 और 15 के तहत कथित रूप से किया गया है

एक लोक सेवक द्वारा, पिछली मंजूरी के अलावा,
(क) एक व्यक्ति के मामले में जो इसके संबंध में कार्यरत है

संघ के कार्य और केंद्र सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा उसके कार्यालय से हटाने योग्य नहीं है।

सरकार;

(ख) किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में जो किसी राज्य के मामलों के संबंध में कार्यरत है और राज्य सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है।

सरकार;
(ग) किसी अन्य व्यक्ति के मामले में, सक्षम प्राधिकारी का

उसे उसके कार्यालय से हटा दें।

9. उन्होंने इस बात पर जोर देने की कोशिश की कि "पिछली मंजूरी को छोड़कर किसी अपराध का संज्ञान लेने" के लिए अदालत पर प्रतिबंध है।

10. इसके बाद हम Cr.P.C के अध्याय XIV का उल्लेख कर सकते हैं, जो "कार्यवाही शुरू करने के लिए शर्तों की आवश्यकता" शीर्षक के तहत है। धारा 190 में कहा गया है कि कब संज्ञान लिया जाएगा और है सुविधा के लिए निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गयाः

(क) तथ्यों की शिकायत प्राप्त करने पर जो इस प्रकार का गठन करते हैं अपराध;

(ख) ऐसे तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर; [2018] 3 एस. सी. आर.

(ग) पुलिस अधिकारी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति से प्राप्त सूचना पर, या उसकी अपनी जानकारी पर, कि इस तरह के अपराध के लिए - प्रतिबद्ध किया गया।

(2) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी भी मजिस्ट्रेट को अधिकार दे सकता है। ऐसे अपराधों की उप-धारा (1) के तहत संज्ञान लेना जो जांच करने या प्रयास करने की उसकी क्षमता के भीतर हैं।

11. उसी अध्याय के तहत Cr.P.C की धारा 197 निर्धारित करती है।

न्यायालय के समक्ष मंजूरी प्राप्त करने की शर्त का संज्ञान लिया जाता है

सेंट एक लोक सेवक। प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

" 197. न्यायाधीशों और लोक सेवकों का अभियोजन। - (1) जब कोई व्यक्ति जो न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट या लोक सेवक है या था जो सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है, उस पर किसी भी कथित अपराध का आरोप लगाया जाता है।

अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का इरादा रखते हुए उसके द्वारा किया गया, कोई भी न्यायालय पूर्व मंजूरी के अलावा ऐसे अपराध का संज्ञान नहीं लेगा।

(क) किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में जो नियोजित है या, जैसा भी मामला हो, नियोजित कथित अपराध के समय था,

संघ के मामलों के संबंध में, केंद्रीय

सरकार;

अनुच्छेद 356 के खंड (1) के तहत जारी की गई घोषणा संविधान एक राज्य में लागू था, खंड (बी) इस तरह लागू होगा जैसे कि

उसमें होने वाली अभिव्यक्ति "राज्य सरकार",

"केंद्र सरकार" अभिव्यक्ति को प्रतिस्थापित किया गया।

12. एक बार संज्ञान लेने के बाद "मजिस्ट्रेटों को शिकायतें" शीर्षक के साथ तेर XV के तहत प्रक्रिया शुरू की जाती है। यह होगा

धारा 200 को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत करना:

शिकायतकर्ता और उपस्थित गवाह, यदि कोई हों, और ऐसी जाँच के सार को लिखित कर दिया जाएगा और उन पर हस्ताक्षर किए जाएंगे। शिकायतकर्ता और गवाहों द्वारा और मजिस्ट्रेट द्वारा भी:

मंजू सुराना बनाम। सुनील अरोड़ा और ओआरएस। [संजय किशन कौल, जे।]

(क) यदि कोई लोक सेवक जो अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य कर रहा है या कार्य करने का इरादा रखता है या किसी न्यायालय ने शिकायत की है; या (ख) यदि मजिस्ट्रेट धारा 192 के तहत किसी अन्य मजिस्ट्रेट को जांच या मुकदमे के लिए मामला सौंपता हैः

बशर्ते कि यदि मजिस्ट्रेट मामले को आगे बढ़ाता है धारा 192 के तहत जांच करने के बाद एक अन्य मजिस्ट्रेट

शिकायतकर्ता और गवाहों, बाद वाले मजिस्ट्रेट को पुनः आवेदन करने की आवश्यकता नहीं है।

उनकी जाँच करें। "

13. मजिस्ट्रेट, यदि वह उचित समझता है, तो आरोपी के खिलाफ एस. ई. एस. के मुद्दे को स्वयं मामले की जांच करने के लिए स्थगित कर सकता है या मामले की जांच करने का निर्देश दे सकता है।

धारा 202 के अनुसार, संज्ञान लेने के बाद, जो है -

इसके नीचे लिखा हैः

" 202. प्रक्रिया के मुद्दे को स्थगित करना। - (1) कोई भी मजिस्ट्रेट, किसी ऐसे अपराध की शिकायत प्राप्त होने पर जिसके लिए वह अधिकृत है संज्ञान लेने के लिए या जो धारा 192 के तहत उसे सौंप दिया गया है, यदि वह उचित समझता है [और ऐसे मामले में जहां

अभियुक्त उस क्षेत्र से परे एक स्थान पर रह रहा है जिसमें वह रहता है।

अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है], अभियुक्त के खिलाफ प्रक्रिया के मुद्दे को स्थगित कर देता है, और या तो स्वयं मामले की जांच करता है या किसी पुलिस अधिकारी द्वारा या ऐसे अन्य व्यक्ति द्वारा जांच करने का निर्देश देता है जिसे वह उचित समझता है, यह तय करने के उद्देश्य से कि क्या नहीं

बशर्ते कि जाँच के लिए ऐसा कोई निर्देश नहीं दिया जाएगा (क) जहाँ मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि अपराध की शिकायत की गई है।

विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है; या

((ख) जहां किसी न्यायालय द्वारा शिकायत नहीं की गई है, जब तक कि -

शिकायतकर्ता और उपस्थित गवाह (यदि कोई हो) धारा 200 के तहत शपथ पर जांच की गई।

(2) उप-धारा (1) के तहत एक जांच में, मजिस्ट्रेट, यदि वह उचित समझते हुए, शपथ पर गवाह का प्रमाण लेंः

बशर्ते कि यदि मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि अपराध

शिकायत विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य है, वह शिकायतकर्ता को अपने सभी गवाहों को पेश करने और शपथ पर उनसे पूछताछ करने के लिए बुलाएगा।

(3) यदि उप-धारा (1) के तहत जांच किसी व्यक्ति द्वारा की जाती है।

पुलिस अधिकारी नहीं होने के नाते, उसके पास उस जांच के लिए इस संहिता द्वारा एक पुलिस अधिकारी के प्रभारी को प्रदत्त सभी शक्तियां होंगी।

बिना वारंट के गिरफ्तार करने की शक्ति को छोड़कर पुलिस स्टेशन।

14. उपरोक्त प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, अब हम "पुलिस को सूचना और जाँच करने की उनकी शक्तियाँ" शीर्षक के साथ अध्याय XII की ओर मुड़ते हैं। धारा 156 इस अध्याय का एक भाग है और निम्नानुसार हैः

" 156. संज्ञेय मामलों की जाँच करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति। (1) पुलिस स्टेशन का प्रभारी कोई भी अधिकारी, मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना, किसी भी संज्ञेय मामले की जांच कर सकता है, जिसकी सीमा के भीतर स्थानीय क्षेत्र पर अधिकार क्षेत्र रखने वाला न्यायालय

ऐसे स्टेशन के पास जांच करने या उसके तहत प्रयास करने की शक्ति होगी

अध्याय XIII के प्रावधान।

(2) ऐसे किसी भी मामले में किसी पुलिस अधिकारी की किसी भी कार्यवाही पर किसी भी स्तर पर इस आधार पर सवाल नहीं उठाया जाएगा कि मामला ऐसा था जिसे इस धारा के तहत अधिकार नहीं दिया गया था।

जाँच करें।
(3) धारा 190 के तहत सशक्त कोई भी मजिस्ट्रेट ऊपर उल्लिखित जांच का आदेश दे सकता है।

15. प्रासंगिक प्रावधान Cr.P.C की धारा 156 (3) है. जहां एक मजिस्ट्रेट को निम्नलिखित के संदर्भ में जांच का आदेश देने का अधिकार है - उप-धारा (1) और (2)।

16. इस प्रकार श्री प्रशांत भूषण का कहना है कि पूर्व संज्ञान में की गई जाँच में अंतर है।

ऐसा चरण, जिसमें किसी लोक सेवक के लिए पूर्व मंजूरी की आवश्यकता नहीं होगी, जबकि संज्ञान के बाद की कार्यवाही के लिए पूर्व मंजूरी की आवश्यकता होती है। हम यह भी देख सकते हैं कि पी. सी. अधिनियम की धारा 5 की उप-धारा (4) के संदर्भ में, विशेष न्यायाधीश के समक्ष कार्यवाही के लिए

पी. सी. अधिनियम के तहत विशेष न्यायाधीश को मजिस्ट्रेट माना जाएगा।

17. उपरोक्त संदर्भ में, उन्होंने निर्णयों के एक समूह का उल्लेख किया।

हमने उन और इस मुद्दे से जुड़े कुछ अन्य मामलों का विश्लेषण किया है।

मंजू सुराना बनाम। सुनील अरोड़ा और ओआरएस। [संजय किशन कौल, जे।]

Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत कार्यवाही की प्रकृति पर निर्णय एक जांच है। :

18. आर. आर. चारी बनाम यू. पी. 6, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने इस न्यायालय की स्थापना के वर्षों में गोपाल मारवाड़ी का उल्लेख किया था।

वी. सम्राट ने कहा कि 'संज्ञान' शब्द उस बिंदु को इंगित करता है जब कोई मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश पहली बार किसी अपराध का न्यायिक नोटिस लेता है। यह कार्यवाही शुरू करने से अलग था। 'संज्ञान' शब्द कुछ हद तक अनिश्चित महत्व का था और शायद ठीक उसी अर्थ में उपयोग नहीं किया गया था। इसके बाद इसने दास गुप्ता, जे. इन सुपरिटेंडेंट एंड रिमेम्ब्रांसर ऑफ लीगल अफेयर्स, पश्चिम बंगाल बनाम की टिप्पणियों पर ध्यान दिया। अबनी कुमार बनर्जी कहाँ

इस आशय की टिप्पणियाँ की गईं कि जो संज्ञान ले रहा है उसे Cr.P.C में परिभाषित नहीं किया गया है, लेकिन यह कहा जा सकता है कि कोई भी मजिस्ट्रेट

19. गोपाल दास सिंधी बनाम। असम राज्य (तीन न्यायाधीशों की पीठ), आर. आर. चारी 0 में निर्णय का पालन किया गया। 20. जमुना सिंह बनाम। भदाई शाह "(तीन न्यायाधीशों की पीठ), आर. आर. चारी 1 2 में निर्णय का पालन किया गया।

21. निर्मलजीत सिंह हूं बनाम। W.B.[13] 13 (तीन न्यायाधीशों की पीठ) की स्थिति में, यह प्रचार करने की मांग की गई थी कि पुलिस द्वारा जांच

6 1951 एससीआर 312

10 ऊपर 11 (1964) 5 एससीआर 37

12

ऊपर

13 (1973) 3 एससीसी 753 [2018] 3 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

पुलिस अधिकारियों को Cr.P.C की धारा 154 और 156 के तहत, न्यायिक प्राधिकरण से किसी भी मंजूरी की आवश्यकता के बिना एक संज्ञेय अपराध की जांच करने का वैधानिक अधिकार है। दूसरा, Cr.P.C की धारा 190 (1) (a) के तहत संज्ञान लेने के लिए, एक मजिस्ट्रेट को न केवल अपना दिमाग लगाया होना चाहिए, बल्कि कार्यवाही के उद्देश्यों के लिए ऐसा किया होना चाहिए। धारा 200 और उस धारा के बाद के प्रावधानों के तहत। केवल धारा 156 (3) के तहत जांच का आदेश देने या जांच के उद्देश्यों के लिए वारंट जारी करने के लिए दिमाग के आवेदन को अपराध का संज्ञान नहीं लिया जा सकता है।

22. देवरपल्ली लक्ष्मीनारायण रेड्डी बनाम। वी. नारायण

रेड्डी 1 4 (तीन न्यायाधीशों की पीठ)-- श्री प्रशांत भूषण ने

अनुच्छेद 1 की धारा 156 (3) के विश्लेषण के लिए उपरोक्त निर्णय। पैरा 13 में यह देखा गया है कि जब कोई मजिस्ट्रेट शिकायत प्राप्त करता है तो वह संज्ञान लेने के लिए बाध्य नहीं होता है यदि शिकायत में आरोप लगाए गए तथ्य किसी अपराध के होने का खुलासा करते हैं। केवल अगर वह यह राय बनाता है कि उसमें आरोप एक संज्ञेय अपराध का खुलासा करते हैं और धारा 156 (3) के तहत जांच के लिए पुलिस को शिकायत भेजना न्याय के लिए अनुकूल होगा और मजिस्ट्रेट का मूल्यवान समय किसी ऐसे मामले की जांच में बर्बाद होने से बचेगा जो मुख्य रूप से पुलिस का जांच करने का कर्तव्य था, तो वह स्वयं अपराध का संज्ञान लेने के विकल्प के रूप में उस पाठ्यक्रम को अपनाने के लिए उचित होगा। इसके बाद पैरा 14 और 17 में इसे निम्नानुसार देखा गया हैः

" 14. यह आनुषंगिक प्रश्न उठाता हैः धारा 190 के विचार के भीतर एक मजिस्ट्रेट द्वारा "अपराध का संज्ञान लेने" का क्या अर्थ है? इस अभिव्यक्ति को संहिता में परिभाषित नहीं किया गया है। लेकिन संहिता की योजना से, धारा 190 की सामग्री और सीमांत शीर्षक और अध्याय XIV का शीर्षक जिसके तहत धारा 190 से 199 तक होती है, यह स्पष्ट है कि अदालत में मामला तभी शुरू किया जा सकता है जब अदालत उसमें कथित अपराध का संज्ञान लेती है। जिन तरीकों से इस तरह का संज्ञान लिया जा सकता है

धारा 190 (1) के खंड (ए), (बी) और (सी) में दिए गए हैं।

क्या मजिस्ट्रेट ने इसका संज्ञान लिया है या नहीं अपराध विशेष मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करेगा।

जिसमें वह तरीका भी शामिल है जिसमें मामला दर्ज करने की मांग की गई है,

14 (1976) 3 एस. सी. सी. 252 मंजू सुराना बनाम।

सुनील अरोड़ा और ओआरएस। [संजय किशन कौल, जे।]

और मजिस्ट्रेट द्वारा की गई प्रारंभिक कार्रवाई, यदि कोई हो, की प्रकृति। मोटे तौर पर, जब कोई शिकायत प्राप्त होने पर, मजिस्ट्रेट धारा 200 और 1973 की संहिता के अध्याय XV में आने वाली धाराओं के तहत कार्यवाही के उद्देश्यों के लिए अपने दिमाग का उपयोग करता है, तो कहा जाता है कि उसने

धारा 190 (1) (ए) के अर्थ के भीतर अपराध। यदि, अध्याय XV के तहत कार्यवाही करने के बजाय, उसने अपने विवेक के न्यायिक प्रयोग में, किसी अन्य प्रकार की कार्रवाई की है, जैसे कि जांच के उद्देश्य से तलाशी वारंट जारी करना, या आदेश देना।

धारा 156 (3) के तहत पुलिस द्वारा की गई जांच में यह नहीं कहा जा सकता है कि उसने किसी भी अपराध का संज्ञान लिया है।

.....

... .

" 17. धारा 156 (3) अध्याय XII में शीर्षक के तहत आती है: " पुलिस को जानकारी और जाँच करने की उनकी शक्तियाँ "; जबकि

धारा 202 अध्याय XV में है जिसका शीर्षक है: " मजिस्ट्रेटों को शिकायतों के बारे में "। पुलिस को आदेश देने की शक्ति

जांच में पूरी निरंतर प्रक्रिया शामिल होती है जो धारा 156 के तहत साक्ष्य के संग्रह के साथ शुरू होती है और धारा 173 के तहत एक रिपोर्ट या आरोप पत्र के साथ समाप्त होती है। दूसरी तरफ साथ ही, धारा 202 एक ऐसे स्तर पर आती है जब मजिस्ट्रेट द्वारा अध्याय XV के तहत कार्यवाही में कुछ साक्ष्य एकत्र किए गए हैं, लेकिन इसे [2018] 3 एस. सी. आर. के बारे में निर्णय लेने के लिए अपर्याप्त माना जाता है।

निर्धारित प्रक्रिया में अगला कदम। ऐसी स्थिति में, मजिस्ट्रेट को धारा 202 के तहत यह तय करने के उद्देश्य से कि क्या इसके लिए पर्याप्त आधार है या नहीं, उस धारा द्वारा सीमित सीमाओं के भीतर एक जांच का निर्देश देने का अधिकार है। आगे बढ़ रहा है "। इस प्रकार धारा 202 के तहत जांच का उद्देश्य पुलिस रिपोर्ट पर एक नया मामला शुरू करना नहीं है, बल्कि मजिस्ट्रेट को पहले से स्थापित कार्यवाही को पूरा करने में सहायता करना है।

उसके सामने शिकायत करें।

23. तुला राम बनाम। किशोर सिंह (दो न्यायाधीशों की पीठ)-हमारे समक्ष उद्धृत, यह देखा गया कि Cr.P.C की धारा 190 और 156 (3) परस्पर अनन्य हैं और पूरी तरह से अलग-अलग क्षेत्रों में काम करती हैं। इस प्रकार, भले ही एक मजिस्ट्रेट को धारा 190 के तहत शिकायत प्राप्त हो, वह धारा 156 (3) के तहत कार्रवाई कर सकता है बशर्ते कि वह संज्ञान न ले। अध्याय 14 संज्ञान के बाद के चरण से संबंधित है जबकि अध्याय 12, जहाँ तक

निम्नलिखित प्रावधानों के अनुसार, वह धारा 156 (3) का सहारा नहीं ले सकता है। इस प्रकार, धारा 202 केवल उन मामलों में लागू होगी जहां मजिस्ट्रेट ने लिया है। संज्ञान लेते हैं और स्वयं या किसी अन्य एजेंसी के माध्यम से शिकायत की जांच करने का विकल्प चुनते हैं। ऐसा करने के लिए आगे बढ़ने से पहले, ऐसी स्थिति हो सकती है जब मजिस्ट्रेट, स्वयं संज्ञान लेने से पहले, Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत एक शुद्ध और सरल जांच का आदेश देने का विकल्प चुनता है।

24. श्रीनिवास गुंडलुरी बनाम। एस. ई. पी. सी. ओ. इलेक्ट्रिक पावर कंस्ट्रक्शन कार्पोरेशन 1 6 (दो न्यायाधीशों की पीठ)-मामले में मजिस्ट्रेट ने केवल शिकायतकर्ता द्वारा आई. डी. 1 की धारा 156 (3) के तहत दायर आवेदन को स्वीकार कर लिया था और उसे अपने अनुलग्नक के साथ पुलिस अधिकारी द्वारा जांच के लिए भेज दिया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह संज्ञान लेने के बराबर नहीं है।

25. सुब्रमण्यम स्वामी बनाम। सी. बी. आई. "(पाँच न्यायाधीशों की पीठ)-यह था

यह पाया गया कि Cr.P.C की धारा 156 एक पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को संज्ञेय अपराध की जांच करने में सक्षम बनाती है। जहाँ तक गैर-संज्ञेय अपराधों का संबंध है, यह पाया गया कि पुलिस अधिकारी धारा 155 Cr.P.C के आधार पर मजिस्ट्रेट से उचित आदेश प्राप्त करने के बाद इसकी जांच कर सकता है, जिसके पास इस तरह के मामले की सुनवाई करने की शक्ति है।

1 5 (1977) 4 एस. सी. सी 459

6 (2010) 8 एस. सी. सी. 206 17 (2014) 8 एस. सी. सी. 682 मंजू सुराना बनाम।

सुनील अरोड़ा और ओआरएस। [संजय किशन कौल, जे।]

या संबंधित अधिकारी की स्थिति की परवाह किए बिना मुकदमे के लिए मामला प्रतिबद्ध करें। इसे ध्यान में रखते हुए, Cr.P.C की धारा 155 और 156 की योजना को यह इंगित करने के लिए आयोजित किया गया था कि स्थानीय पुलिस किसी मामले की जांच कर सकती है।

केंद्र सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना वरिष्ठ सरकारी अधिकारी।

संविधान पीठ ने पी. सी. अधिनियम के तहत जांच और जांच पर विचार करते हुए कहा कि लोक सेवकों के दो समूहों को इस आधार पर अलग-अलग वर्गीकृत करने का कोई आधार नहीं है कि अधिकारियों का एक समूह निर्णय लेने वाले अधिकारी हैं न कि अधिकारियों का दूसरा समूह।

26. उपरोक्त निर्णयों के बावजूद, इस न्यायालय के दो निर्णयों में एक अलग रास्ता अपनाया गया है जहां अपराध आई. पी. सी. के साथ पढ़े गए पी. सी. अधिनियम के तहत आरोप लगाए गए हैं।

27. अनिल कुमार बनाम। एम. के. अयप्पा "(दो न्यायाधीशों की पीठ),

अदालत इस बात की जांच करने के लिए आगे बढ़ी कि क्या मजिस्ट्रेट ने अभ्यास करते हुए Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत उसकी शक्तियां यांत्रिक या आकस्मिक तरीके से कार्य कर सकती हैं और रिपोर्ट प्राप्त करने के बाद शिकायत के साथ आगे बढ़ सकती हैं।

उस संदर्भ में, मकसूद सैयद बनाम में एक पूर्व निर्णय का संदर्भ दिया गया था। गुजरात राज्य का मामला, जहाँ यह देखा गया कि वहाँ

Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत अधिकारिता का प्रयोग करने से पहले मजिस्ट्रेट द्वारा दिमाग के आवेदन की आवश्यकता थी। इसके बाद पीठ ने एक निष्कर्ष निकाला कि एक विशेष

न्यायाधीश/मजिस्ट्रेट वैध मंजूरी आदेश के बिना किसी लोक सेवक के खिलाफ Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत मामला नहीं भेज सकते हैं।

28. पीठ आगे इस बात की जांच करने के लिए आगे बढ़ी कि क्या Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देने वाला आदेश समान होगा।

अपराध का संज्ञान लेने के लिए क्योंकि एक तर्क उठाया गया था कि पी. सी. अधिनियम की धारा 19 (1) में दिखाई देने वाली "संज्ञान" अभिव्यक्ति को संज्ञान के बाद के चरण के रूप में समझना होगा और नहीं

पूर्व-संज्ञान चरण और इसलिए, मंजूरी की आवश्यकता है

पी. सी. अधिनियम के अपराधों का संज्ञान लेने से पहले उत्पन्न नहीं होता है। जहां तक 'संज्ञान' अभिव्यक्ति का संबंध है, जो Cr.P.C की धारा 197 में दिखाई देती है, यू. पी. बनाम राज्य में निर्णय के लिए एक संदर्भ दिया गया था। पारस नाथ सिंह 20. उस मामले में यह देखा गया था कि किसी भी अपराध का संज्ञान लेने के लिए मजिस्ट्रेट का अधिकार क्षेत्र है -

9 (2008) 5 एस. सी. सी. 668 2 0 (2009) 6 एस. सी. सी. 372 [2018] 3 एस. सी. आर.

Cr.P.C की धारा 190 द्वारा प्रदान किया गया था और जहाँ तक लोक सेवक का संबंध था, इसे Cr.P.C की धारा 197 द्वारा स्पष्ट रूप से वर्जित किया गया था, जब तक कि उपयुक्त प्राधिकारी से मंजूरी प्राप्त नहीं की गई थी। 'संज्ञान' शब्द के उद्देश्य और अर्थ के मुद्दे पर कुछ अन्य निर्णयों का उल्लेख करने के बाद, यह निष्कर्ष निकाला गया कि 'संज्ञान' का व्यापक अर्थ है और यह केवल अपराध का संज्ञान लेने के चरण तक ही सीमित नहीं है। 29. पीठ ने पी. सी. अधिनियम की धारा 19 (1) के साथ-साथ पी. सी. अधिनियम की धारा 19 (3) पर भी चर्चा की, जो इस प्रकार हैः

" 19. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी आवश्यक है। (3) दंड संहिता में कुछ भी निहित होने के बावजूद

प्रक्रिया, 1973 (1974 का 2), -

(क) किसी विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित किसी भी निष्कर्ष, सजा या आदेश को अदालत द्वारा अपील, पुष्टि या संशोधन में अनुपस्थिति या किसी त्रुटि, चूक या चूक के आधार पर उलट या बदला नहीं जाएगा। उप-धारा (1) के तहत अपेक्षित मंजूरी में अनियमितता, जब तक कि उस अदालत की राय में, वास्तव में न्याय की विफलता नहीं हुई है।

इस प्रकार हुआ;

(ख) कोई भी अदालत प्राधिकरण द्वारा दी गई मंजूरी में किसी भी त्रुटि, चूक या अनियमितता के आधार पर इस अधिनियम के तहत कार्यवाही पर रोक नहीं लगाएगी, जब तक कि यह संतुष्ट नहीं हो जाता है कि ऐसी त्रुटि, चूक या अनियमितता न्याय की विफलता के परिणामस्वरूप;

(ग) कोई भी अदालत किसी अन्य आधार पर इस अधिनियम के तहत कार्यवाही पर रोक नहीं लगाएगी और कोई भी अदालत किसी भी जांच, मुकदमे, अपील में पारित किसी भी अंतर्वर्ती आदेश के संबंध में संशोधन की शक्तियों का प्रयोग नहीं करेगी।

अन्य कार्यवाही "।

30. यह तर्क दिया गया कि मंजूरी की आवश्यकता केवल प्रक्रियात्मक प्रकृति की थी और इसलिए निर्देशिका या अन्य

पी. सी. अधिनियम की धारा 19 (3) को अनुचित माना जाएगा। यह तर्क स्वीकार्य नहीं पाया गया क्योंकि पी. सी. अधिनियम की धारा 19 की उप-धारा (3) का एक उद्देश्य था जिसे प्राप्त करना था, जो केवल उन परिस्थितियों में लागू होता था जहां एक विशेष न्यायाधीश पहले ही एक निष्कर्ष, सजा या आदेश दे चुका था। इसका मतलब यह नहीं होगा कि मंजूरी प्राप्त करने की आवश्यकता एक अनिवार्य आवश्यकता नहीं थी। पूर्व मंजूरी के अभाव में, यह देखा गया कि मजिस्ट्रेट Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत शक्ति का उपयोग करते हुए भी किसी लोक सेवक के खिलाफ जांच का आदेश नहीं दे सकता है।

मंजू सुराना बनाम। सुनील अरोड़ा और ओआरएस। [संजय किशन कौल, जे।]

31. एल. नारायण स्वामी बनाम कर्नाटक राज्य 2 (दो न्यायाधीशों की पीठ) अनिल कुमार बनाम मामले में निर्णय। एम. के. अयप्पा 2 2 पीछा किया। विभिन्न अन्य घोषणाओं पर चर्चा करने के बाद, यह था

यह निष्कर्ष निकाला कि Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देते समय भी, मजिस्ट्रेट शिकायत पर अपने न्यायिक दिमाग को लागू करता है और इसलिए, यह मामले का संज्ञान लेने के बराबर होगा।

32. श्री तुषार मेहता, विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने उपरोक्त पिछले दो निर्णयों में लिए गए विचार को स्पष्ट करने का प्रयास किया। यह प्रस्तुत करने के लिए कि शक्ति का प्रयोग करने के लिए मन का उपयोग आवश्यक था

प्रकृति में तकनीकी और इसके लिए उच्च मूल्यांकन मानक की आवश्यकता होगी और इस प्रकार मजिस्ट्रेटों को आदेश देने से पहले अपना दिमाग लगाना चाहिए। लोक सेवक के खिलाफ जांच। यह प्रस्तुत किया गया था कि Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच शुरू करने के परिणामों के परिणामस्वरूप पुलिस एक प्राथमिकी दर्ज करेगी (सुरेश चंद जैन बनाम. की स्थिति

मध्य प्रदेश 2 4 और मोहम्मद। यूसुफ बनाम। अफाक जहाँ ")। इस प्रकार, ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है जहां एक मजिस्ट्रेट नियमित तरीके से Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग कर सकता है, जिसके परिणामस्वरूप एक लोक सेवक के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की जा सकती है, जिसकी लगाए गए आरोप में कोई भूमिका नहीं हो सकती है। 33. हमने प्रतिद्वंद्वी दलीलों की जांच की है और राय में अंतर पाया है, जिसे एक बड़ी पीठ द्वारा निपटाया जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि 156 (3) के स्तर पर भी, जाँच का निर्देश देते समय, मजिस्ट्रेट द्वारा विवेक का प्रयोग किया जाना चाहिए। इस प्रकार, यह तर्क देना एक स्वीकार्य प्रस्ताव नहीं हो सकता है कि मजिस्ट्रेट को इस मामले में कार्रवाई करने पर कुछ परिणाम भुगतने होंगे।

यांत्रिक और अविवेकी तरीके से। यह परीक्षा नहीं हो सकती।

स्थापित किया गया। इस प्रकार, सवाल यह होगा कि क्या पी. सी. अधिनियम के मामलों में, एक अलग आयात को प्रयोग की जाने वाली शक्ति के लिए पढ़ा जाना चाहिए। 21 (2016) 9 एस. सी. सी. 598

22 ऊपर

24 (2001) 2 एस. सी. सी. 628 25 (2006) 1 एससीसी 627 [2018] 3 एस. सी. आर.

Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत, यानी, क्या यह कहा जा सकता है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 19 (1) के कारण, Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच की गुंजाइश को 'संज्ञान' लेने में से एक कहा जा सकता है।

लोक सेवक के मामले में पूर्व मंजूरी की आवश्यकता है? यह कहना तुच्छ है कि पी. सी. अधिनियम के तहत अपराधों के लिए एक लोक सेवक पर मुकदमा चलाने की पूर्व मंजूरी Cr.P.C के अध्याय 14 के तहत निहित एक प्रावधान है। इस प्रकार, क्या इस तरह के उद्देश्य को Cr.P.C के अध्याय 12 में आयात किया जा सकता है. Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देते हुए, केवल इसलिए कि एक लोक सेवक शामिल होगा, यह अनुरोध किया जाएगा।

एक जवाब।

35. विद्वान ए. एस. जी. द्वारा व्यक्त की गई आशंका संभवतः सुरेश चंद जैन बनाम में टिप्पणियों से उत्पन्न होती है। मध्य राज्य

प्रदेश 26 ने मोहम्मद में अनुसरण किया। यूसुफ बनाम। अफाक जहाँ "। इस प्रकार, टिप्पणियां इस प्रभाव के लिए हैं कि आई. डी. 1 की धारा 156 (3) के तहत एक पूर्व-संज्ञान स्तर पर भी, मजिस्ट्रेट के लिए यह खुला है कि वह पुलिस को एफ. आई. आर. दर्ज करने का निर्देश दे और यह कि भले ही मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देते हुए इतने शब्दों में नहीं कहता है कि एफ. आई. आर. दर्ज की जानी चाहिए, यह पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी का कर्तव्य है कि वह शिकायतकर्ता द्वारा प्रकट किए गए संज्ञेय अपराध के संबंध में एफ. आई. आर. दर्ज करे क्योंकि वह पुलिस अधिकारी उसके बाद ही संहिता के अध्याय XII में विचार किए गए आगे के कदम उठा सकता है।

36. उपरोक्त संदर्भित संपूर्ण विवाद और

इस प्रकार, पी. सी. अधिनियम के अपराधों की परस्पर क्रिया के संबंध में उत्पन्न होने वाली पहेली को Cr.P.C के साथ पढ़ा जाता है, जिसे एक बड़ी पीठ द्वारा निपटाया जाना आवश्यक है।

37. इन कागजातों को भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जा सकता है ताकि उन्हें उचित संख्या वाली पीठ के समक्ष रखा जा सके।

सीआरएल। एस. एल. पी. (सी. आर. एल.) में एम. पी. 161/2015 No.5838/2014

38. जहां तक मुख्य मामले का संबंध है, हमने एक बड़ी पीठ को संदर्भित करते हुए एक विस्तृत आदेश पारित किया है। यह ध्यान दिया जा सकता है कि वर्तमान विशेष अनुमति याचिका में, प्रतिवादी संख्या 4 को छोड़कर, उत्तरदाताओं को नोटिस जारी किया गया था। चूंकि इससे पहले की कार्यवाही

सीमा पर मजिस्ट्रेट को प्रतिवादी को सूचना दिए बिना स्थगन में रखने का निर्देश दिया गया था, और उसके बाद पुनरीक्षण याचिका को उच्च न्यायालय द्वारा सीमित रूप से खारिज कर दिया गया था।

प्रत्यर्थी संख्या 1 को कार्यवाही की जानकारी नहीं थी। प्रत्यर्थी संख्या 1 इन कार्यवाही में पक्षों की श्रृंखला से हटाने की मांग करता है क्योंकि उसे गलत तरीके से एक पक्ष के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

39. उपरोक्त याचिका स्वयं शिकायत में किए गए अभिकथनों पर आधारित है, जो शिकायतकर्ता के कार्यों पर शिकायत करना चाहता है।

प्रधान सचिव, सार्वजनिक स्वास्थ्य और अभियांत्रिकी विभाग (पी. एच. ई. डी.), जिसमें उत्तरदाता संख्या 1 को नियुक्त किया गया है। आवेदन में यह कहा गया है कि प्रतिवादी संख्या 1 एक के रूप में कार्य कर रहा था

मुख्यमंत्री के सचिव और प्रधान सचिव, न कि प्रधान सचिव, पीएचईडी के रूप में। वास्तव में, पीएचईडी के प्रधान सचिव के रूप में काम करने वाले अधिकारी को प्रतिवादी के रूप में नियुक्त नहीं किया गया है। मुख्यमंत्री के सचिव/प्रधान सचिव के खिलाफ कोई आरोप नहीं लगाया गया है। आरोप प्रत्यर्थियों की मिलीभगत का है।

40. आवेदन में किए गए कथनों के संदर्भ में, प्रतिवादी संख्या 1 ने यह इंगित करने की कोशिश की कि अभियुक्त के रूप में उनके बारे में केवल दो संदर्भ हैं

संख्या 1-पैरा 4 (iv) और पैरा 8। ये निविदाएं आमंत्रित करने, वर्तमान परियोजनाओं को चलाने के लिए बजट की कमी और इसकी रिपोर्ट के संदर्भ में हैं।

माननीय मंत्री जी, पीएचईडी। इस प्रकार, यह आरोप लगाया जाता है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 न तो निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल था और न ही उसने इनमें से कोई भी निर्णय लिया था। दो पद।

42. आवेदन का विरोध करने की मांग की गई है और अपीलार्थी द्वारा एक जवाबी हलफनामा दायर किया गया था। यह कहा गया है कि प्रतिवादी संख्या 1 अनजाने में हुई गलती का अनुचित लाभ उठाने की कोशिश कर रहा है।

43. 20.2.2018 पर, हमने अपीलार्थी को मजिस्ट्रेट के सामने रखी गई सामग्री को रिकॉर्ड में रखने के निर्देश जारी किए थे प्रतिवादी संख्या 1 की कथित संलिप्तता का संकेत देने वाली शिकायत। इसके जवाब में, अपीलार्थी द्वारा एक पूरक हलफनामा दायर किया गया था।

इस ओर से 9.5.2008 की एक फाइल नोटिंग का उल्लेख किया जाता है।

एक ही परियोजना के वित्तपोषण और उपस्थिति के संबंध में था

प्रतिवादी संख्या 1 का उल्लेख किया गया है, हालांकि निर्विवाद रूप से कार्यवृत्त पर उनके द्वारा हस्ताक्षर नहीं किए गए हैं, जबकि उन पर अन्य अधिकारियों द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं। यह कहा गया है कि चूंकि मुख्यमंत्री के प्रधान सचिव की चर्चा में कोई भूमिका नहीं थी, इसलिए वह/प्रतिवादी नंबर 1 क्यों मौजूद थे?

44. हम विद्वान परामर्श की प्रस्तुति पर भी ध्यान दे सकते हैं

प्रत्यर्थी संख्या 1 के लिए कि यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है जहां मजिस्ट्रेट को Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत शिकायत पर आगे बढ़ना पड़ता है और जांच के दौरान कुछ सामग्री पाई जाती है, तो वकील वास्तव में उस स्तर पर प्रत्यर्थी संख्या 1 का नाम शामिल करने पर आपत्ति नहीं कर सकता है। हालाँकि, इस स्तर पर समावेशन को बिना किसी भौतिक तथ्यों के कहा गया है और प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा धारण की गई संवैधानिक स्थिति को देखते हुए यह एक शर्मिंदगी है।

45. हमने पक्षों की संबंधित दलीलों पर विचार किया है।

46. इसमें कोई संदेह नहीं है कि Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत प्रक्रिया केवल एक जांच है। बड़ा सवाल यह है कि क्या ऐसा कोई है?

पूर्व मंजूरी के बिना निर्देश जारी किया जा सकता है

नाम का गलत विवरण, जिसे ठीक किया जा सकता है। यह अपीलार्थी का रुख नहीं हो सकता है कि किसी भी तरह, प्रतिवादी संख्या 1 को उन कार्यवाहियों में अभियुक्त के रूप में रखा जाना चाहिए, भले ही - मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही केवल इस स्तर पर होती है कि जाँच के लिए कोई निर्देश होना चाहिए या नहीं। ऐसा नहीं है कि सरकार में प्रत्येक अधिकारी को किसी भी भूमिका के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए या नहीं। प्रतिवादी संख्या 1 की एक बैठक में केवल उपस्थिति और वह भी

जब वे हस्ताक्षरकर्ता नहीं थे और वास्तव में उस क्षमता में उनकी कोई भूमिका नहीं थी, मंजू सुराना बनाम।

सुनील अरोड़ा और ओआरएस। [संजय किशन कौल, जे।]

कार्यवृत्त से स्पष्ट रूप से, अब उसका नाम एक आरोपी के रूप में शामिल किए जाने को सही ठहराने के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है। यह स्पष्ट रूप से एक विचार है। यह प्रश्न करना अपीलार्थी का काम नहीं है कि कौन सा अधिकारी होना चाहिए या नहीं होना चाहिए। उपस्थित हैं।

48. इस प्रकार, हमारा विचार है कि प्रतिवादी संख्या 1 को वर्तमान कार्यवाहियों में दोनों पक्षों से अलग करने की आवश्यकता है और

परिणामस्वरूप शिकायत में। तथापि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि यदि

ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है जब Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश दिया जाता है और प्रतिवादी संख्या 1 को एक आरोपी के रूप में प्रस्तुत करने के लिए कुछ सामग्री सामने आती है, तो हमारा आदेश रास्ते में नहीं आएगा।

49. तदनुसार आवेदन की अनुमति दी जाती है, जिससे पक्षकारों को अपनी लागत वहन करनी पड़ती है।

(एस. एल. पी. (सी. आर. एल.) से बाहर निकलना 2015 का No.1092)

50. छुट्टी दे दी गई।

51. मामला एस. एल. पी. (सी. आर. एल.) के साथ एक बड़ी पीठ को भेजा जाता है। No.5838/2014 आज पारित निर्णय के संदर्भ में।

मामले बड़ी पीठ को

संदर्भित किए जाते हैं।

निधि जैन